# पर्यावरण साहित्य और हरित चिंतन

रंजना पिल्लै

हिन्दी विभागाध्यक्ष, सिन्धी महाविद्यालय

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.18784089

**ABSTRACT:**

प्रस्तुत आलेख 'पर्यावरण साहित्य और हरित चिंतन' में प्रकृति और मानव के अन्योन्याश्रित संबंधों तथा हिंदी साहित्य में निहित पर्यावरणीय चेतना का विश्लेषण किया गया है। लेखिका ने रेचल कर्सन की 'साइलेंट स्प्रिंग' के संदर्भ से लेकर हिंदी साहित्य के विभिन्न कालखंडों में व्याप्त प्रकृति प्रेम को रेखांकित किया है। इसमें तुलसीदास द्वारा वृक्षारोपण, रहीम द्वारा जल संरक्षण, सुमित्रानंदन पंत के सुकुमार प्रकृति चित्रण और कबीर के पारिस्थितिकीय चिंतन का विशेष उल्लेख है। आलेख यह स्थापित करता है कि प्राचीन साहित्य में प्रकृति संरक्षण के सूत्र गहरे निहित हैं और 'हरित चिंतन' को अपनाकर ही भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित भविष्य सुनिश्चित किया जा सकता है।

**KEYWORDS:**

पर्यावरण साहित्य, हरित चिंतन, प्रकृति संरक्षण, पर्यावरणीय चेतना, हिन्दी काव्य.

वर्तमान मानव समाज इस ज्वलंत सत्य को समझ चुका है कि बिना प्रकृति के इस भूतल में न केवल मानव मात्र का, अपितु प्रकृति के संपूर्ण जीव-रूपों का जीवन नि:संदेह असंभव है। प्रकृति से अलग होकर मानव के अस्तित्व की परिकल्पना नहीं की जा सकती है क्योंकि वह स्वयं प्रकृति का दूसरा रूप है। प्रदूषित, संसाधनहीन, निर्जीव प्रकृति में मानव का चैन से रहना मात्र एक कल्पना है। जयप्रकाश कर्दम जी जैसे समकालीन कवि इस चिंता को हमारे सामने रखते हुए कहते हैं कि मृत्यु सारे ग्रहों में है, पर जीवन की रंगमयता केवल इस भूमि में मात्र विद्यमान है। समकालीन कवि का सवाल यह है कि हम मृत्यु का वरण करें या जीवन का? आगामी पीढ़ियां सुख से रहें या न रहें?

पर्यावरणीय संवाद के काल में रेचल कर्सन ने १९६२ में अपनी अमर रचना 'साइलेंट स्प्रिंग' का प्रकाशन किया था, जिसमें पूंजीवाद और उससे जन्म लेने वाले औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप विकसित जीवन परिस्थितियों का हवाला देते हुए उन्होंने कहा था कि "इस पृथ्वी

की सारी चीज़ों पर मृत्यु की परछाई छायी हुई है।" कर्सन की चिंता भूगोल के नक्शे को बदलने में सफ़ल हुई है। इनसे प्रेरणा पाकर पर्यावरणीय आंदोलन उभरे, साहित्य रचा गया, संस्थाएं खड़ी की गईं, नवाचार निर्मित हुए, राजनीतिक दलों की स्थापना हुई और संविधान तक प्रकृत्योन्मुख होता गया। वर्तमान में एक विशिष्ट विमर्श का रूप धारण कर पर्यावरणीय विमर्श मानव समाज के सामान्य बोध को निर्मित करने में योगदान दे रहा है। आशा है कि इससे मनुष्य की वैचारिकता और अभिवृत्तियों में परिवर्तन आ सके।

परिवर्तन की लहरें इस भाँति उठ रही हैं कि आज मानव उसी भाँति प्रकृति-पर्यावरण को चाहता है, जैसे मरते जाने वाला आदमी ज़िन्दगी को वापस चाहता है। हिन्दी साहित्य में आदिकाल से ही प्रकृति और पर्यावरण से प्रेम व इसके संरक्षण की बात कही गई है। हिन्दी साहित्य अपनी गहनता और विविधता के साथ हमें प्रकृति और पर्यावरण के महत्त्व को समझाने में सहायक है। पर्यावरण न केवल हमारी जीवन शैली का एक अभिन्न अंग है, बल्कि यह हिन्दी साहित्य में एक महत्त्वपूर्ण प्रेरणा स्रोत भी रहा है। प्राचीन हिन्दी साहित्य में प्रकृति और इसके तत्वों को भगवान के रूप में देखा जाता था। आज संपूर्ण जगत २६ सितम्बर का दिन 'विश्व पर्यावरण स्वास्थ्य दिवस' के रूप में मना रहा है। इस दिवस को मनाने का उद्देश्य हमें पर्यावरण के संरक्षण के लिए प्रेरित करना है। सर्वविदित है कि एक अस्वस्थ पर्यावरण न सिर्फ़ मानवता बल्कि पृथ्वी के समस्त जीवों के लिए घातक है।

## रामचरितमानस में वृक्षारोपण का संदेश

तुलसीदास कृत रामचरितमानस में तुलसीदास ने सीता व लक्ष्मण द्वारा किये गए वृक्षारोपण का चित्रण किया है। उन्होंने लिखा है:

**"तुलसी तरुवर विविध सुहाए।**
**कहुं-कहुं सिय, कहुं लखन लगाए॥"**

उपरोक्त दोहे में तुलसी कहते हैं कि सीता व लक्ष्मण द्वारा लगाए गए विविध प्रकार के पौधे बहुत ही सुन्दर दिखाई दे रहे हैं। यहां तुलसीदास बड़ी ही बारीकी से हमें वृक्षारोपण के लिए प्रेरित कर रहे हैं। निश्चय ही तुलसीदास के समय भारत में पेड़ों और जंगलों की संख्या आज की अपेक्षा अधिक थी, किन्तु उस काल खंड में रचित अपने काव्य में वृक्षारोपण को इंगित करना तुलसीदास का प्रकृति प्रेम दर्शाता है और हमें प्रकृति संरक्षण व पौध रोपण की प्रेरणा देता है।

## जल संरक्षण पर रहीम

## कवि रहीम लिखते हैं:

**"रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून।**
**पानी गए न उबरै, मोती मानुष चून॥"**

यह दोहा रहीम के प्रसिद्ध दोहों में से एक है। इस दोहे में रहीम पानी के महत्त्व को बतलाते हैं। रहीम कहते हैं कि हमें पानी के महत्त्व को समझना चाहिए व उसे संरक्षित करना चाहिए। बिना पानी के सभी चीज़ें अधूरी होती हैं, जैसे कि अनुपजाऊ भूमि। उन्होंने पानी के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए बताया कि मोती पानी के बिना अपनी चमक खो देता है, मानव जीवन भी पानी के बिना संभव नहीं है और चूना भी पानी के बिना पत्थर बन जाता है। अत: जल संरक्षण बहुत आवश्यक है। पानी का संरक्षण सभी की ज़िम्मेदारी है। यह दोहा पर्यावरण की स्थिति के लिए भी प्रासंगिक है। रहीम के इस मार्गदर्शन को अपने जीवन में अपनाना चाहिए।

## प्रकृति के सुकुमार सुमित्रानंदन पंत का प्रकृति प्रेम

सुमित्रानंदन पंत को प्रकृति का सुकुमार कवि कहा जाता है, उनकी कविताओं में प्रकृति प्रेम देखने को मिलता है। प्रकृति के प्रति उनका प्रेम व लगाव अतुलनीय रहा है। वे हमेशा प्रकृति के साथ रहना चाहते हैं। उनकी प्रेरणा, उनका जीवन और उनकी रचना सब प्रकृति में ही निहित है। पंत कहते हैं कि वे प्रकृति से दूर नहीं रह सकते:

**"छोड़ द्रुमों की मृदु छाया,**
**तोड़ प्रकृति से भी माया,**
**बाले! तेरे बाल-जाल में कैसे उलझा दूं लोचन?**
**भूल अभी से इस जग को।"**

हम आज धीरे-धीरे प्रकृति से दूर होते जा रहे हैं, अपने भविष्य के लिए मुसीबत खड़ी करते जा रहे हैं।

## कबीर का प्रकृति चिंतन

कबीर के काव्य में जगह-जगह प्रकृति अपनी पूरी गरिमा व भव्यता के साथ मौजूद है। यहाँ तक कि वह कई बार उपदेशक की भूमिका में भी नज़र आती है, जो इस जटिल व विषमतामय जीवन की परिस्थितियों से उबरने में मनुष्य की सहायता करती है। कहते हैं कि कबीर का जन्म मध्यकाल की जिस संक्रमणकालीन बेला में हुआ था,

उसमें मनुष्य तो मनुष्य, स्वयं प्रकृति भी अपना मार्ग बदल रही थी। उस समय गंगा की मात्र एक लहर पीछे छूट गई थी, उससे जो ताल बना, बनारस में उसका नाम पड़ा 'लहरतारा'। इसी तालाब के किनारे कबीर अपने पालनहार माता-पिता नीरू-नीमा से पहली बार मिले थे। अब ऐसे बालक का प्रकृति व उसके उपादानों से आत्मिक जुड़ाव होना स्वाभाविक है। ऐसे में यदि उनके काव्य में अभिव्यक्त इस पर्यावरणीय चेतना को समझ सकें और इसे जीवन में उतार सकें तो यह उन्हें एक सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

**कबीर कहते हैं:**

**"कबीर मानुष जन्म दुर्लभ है, देह न बारंबार।**
**तरवर थे फल झड़ि पडया, बहुरि न लागै डार॥"**

अर्थात, जिस प्रकार संसार में मनुष्य का जन्म कठिनता से मिलता है उसी प्रकार लाख प्रयत्न करने पर भी एक बार शाख से तोड़ा गया पत्ता वापस जोड़ा नहीं जा सकता। अत: देवोपासना अथवा किसी कर्मकांड के लिए पेड़ से पत्ता तोड़ना (बेल पत्र, धतूरा आदि) कबीर की दृष्टि में असंगत है। क्योंकि:

**"पाती तोरै मालिनी, पाती-पाती जीउ।"**

प्रत्येक पत्ती में जीवों का निवास स्थान है, उसे अनावश्यक हानि नहीं पहुँचानी चाहिए। जो पत्ती अपनी सजीवता में पेड़ के लिए सौंदर्यवर्धक व आभूषण के समान शोभाकारक है, वही उसे तोड़ लिए जाने के उपरांत निर्जीव होने के कारण जीव-जंतु के काम की नहीं रह जाती।

प्रकृति कबीर के काव्य का सार्वभौम व शाश्वत पक्ष है। उनकी दृष्टि में पेड़-पौधे, धरती, आकाश संप्रदाय निरपेक्ष हैं, अत: ये सदैव बने रहने चाहिए। हमारी उत्पत्ति इस धरती से हुई है, वह हमें जीवन का पालन करने हेतु अन्न, जल, फल-फूल सभी प्रदान करती है, किंतु कभी घमंड नहीं करती है, न ही इसे अपना गुण मानती है:

**"सबकी उत्पत्ति धरती, सब जीवन प्रतिपाल।**
**धरती न जाने आप गुन, ऐसा गुरु विचार॥"**

ऐसी अप्रतिम सहनशीलता व महान दातव्य भाव के कारण कई बार वह गुरु से भी बड़ी प्रतीत होती है। पृथ्वीपुत्र वृक्ष भी परोपकार में उससे कम नहीं है। वह पक्षपातरहित होने के कारण सभी को समान रूप

से छाया देता है। निरीह पशु-पक्षियों को आश्रय देता है। प्राणवायु ऑक्सीजन का संचार करता है। उसके फल-फूल, पत्ते और लकड़ी मनुष्य के काम आते हैं। कबीर के शब्दों में वृक्ष का वृक्षत्व उसके इसी परोपकार भाव में निहित है:

**"वृक्ष कबहु नहिं फल भखै, नदी न संचै नीर।**
**परमारथ के कारने, साधुन धरा सरीर॥"**

अर्थात ये मूलत: दूसरे के उपकार के लिए ही जीवन धारण करते हैं, इनका यह व्यवहार सज्जनों के स्वभाव के समतुल्य है। किन्तु स्वार्थी मनुष्य को इसकी परवाह कहां? वह तो हानि रहित होने पर भी पत्ती खाने वाले पशुओं को मारकर खा जाता है। कबीर इसे बड़ी गंभीरता से लेते हैं और ऐसे लोगों को चेतावनी देते हुए कहते हैं कि:

**"बकरी पाती खात है, ताको काढी खाल।**
**जो नर बकरी खात है, ताको कौन हवाल॥"**

वे पेड़-पौधों व जीव-जगत के संरक्षण को धार्मिकता से जोड़कर मनुष्य को प्रकृति की गोद में सहजता व सादगी से जीवन जीने की ओर प्रेरित करते प्रतीत होते हैं। यहां तक कि रोज़मर्रा के जीवन में आने वाली व्यवहारिक कठिनाइयों का समाधान भी वे प्रकृति के आश्रय में खोजते दिखाई पड़ते हैं।

**"कबीर तन पक्षी भया, जहां मन तहां उडि जाइ।**
**जो जैसी संगति करे, सो तैसे फल खाइ॥"**

यहां कबीर ने मनुष्य के सामाजिक जीवन में सत्संगति का महत्त्व बताने के लिए 'पक्षी' के प्राकृतिक प्रतीक का सहारा लिया है। इसी तरह वे बगुले और कौवे के प्रतीक के माध्यम से संसार में सफ़ेदपोश लोगों की पोल खोलते हैं। ऐसे उद्धरण उनके लोकजीवन विषयक सूक्ष्म ज्ञान के परिचायक हैं।

संक्षेप में 'गगन हमारा ग्राम' मानने वाले कबीर इतना तो भली-भांति जानते थे कि जीवन अमूल्य है और इसकी उत्पत्ति शून्य में संभव नहीं है। अत: वे प्राचीन धर्मग्रंथों की सकारात्मक शिक्षाओं को मानव जीवन हेतु उपयोगी बनाने के लिए प्राकृतिक प्रतीक ग्रहण करते हैं और सारे वातावरण में परम सत्ता के प्रकाश का अनुभव करते हैं। जैसे मेहंदी के पत्ते में लालिमा होते हुए भी अन्तर्धान रहती है, उसी प्रकार ईश्वर जड़-चेतन में अन्तर्निहित होते हुए भी अदृश्य रहता है:

**"साहेब तेरी साहिबी, सब घट रही समाय।**
**ज्यों मेहंदी के पात में, लाली रखी न जाए॥"**

इस तरह कबीर का काव्य तमाम पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों व जीव-जंतुओं का ऐसा अनूठा संग्रह बन गया है, जहां उनकी हर गतिविधि पर कवि की पैनी नज़र है।

## आधुनिक हिंदी साहित्य और पर्यावरण

पिछले कुछ दशक तक माना जाता रहा है कि हिन्दी साहित्यकार का सामान्य ज्ञान, अन्य भाषा-भाषियों के मुकाबले कम होता है। इसको लेकर अस्सी के दशक में 'धर्मयुग' जैसी पत्रिका ने एक परिचर्चा ही आयोजित कर दी थी। लेकिन, पिछले करीब बीस सालों के हिन्दी लेखन का अवलोकन करते हैं तो हम पाते हैं कि नब्बे के बाद हिन्दी में विविधतापूर्ण लेखन की सार्थक शुरुआत हुई है। इसका एक बड़ा कारण तो यह था कि १९७७ के बाद मुद्रण में आधुनिक तकनीक का आगमन हुआ। दूसरा, आपातकाल के बाद देश में एक नई तरह का खुलापन, सोच और जिज्ञासा पत्रकारिता जगत में फूटी जो पारंपरिक सांचे से अलग कुछ कर दिखाना चाहती थी।

अब कई नये कवि तक विकास, पर्यावरण, प्रकृति पर संकट की चिंता में कुछ न कुछ लिख रहे हैं और अपनी सशक्त कविताओं से अपनी उपस्थिति दर्ज कर रहे हैं। इस तरह कभी पर्यावरण की समस्या पर चर्चा करना या तो पर्यावरणविदों का या आदिवासियों का मुद्दा माना जाता था। परंतु आज मुख्यधारा के अधिकांश कवियों का यह प्रिय, प्रमुख विषय व चिंता बनता जा रहा है। यही कारण है वर्तमान में हिन्दी की अधिकांश पत्रिकाओं में ऐसी रचनाएं प्रमुखता से स्थान पाने लगी हैं, जिनमें प्रकृति व पर्यावरण संबंधी विभिन्न खतरों आदि के बारे में चिंतन या वर्णन है। कुछ कवियों के कविता संग्रह का शीर्षक है- 'जंगल में फिर आग लगी है', 'जंगल', 'पागल हाथी और ढोल', 'जंगल पहाड़ के पाठ', 'शाल वन की धरा से' आदि। अधिकांश हिन्दी कवि आज जंगल, पहाड़, नदी, पेड़, पौधे, जीव-जंतुओं, हरियाली, धरती की उर्वरता आदि की चिंता करते दिख रहे हैं और ऐसी संवेदनशील रचनाओं की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। सजग रचनाकार हमें निरंतर जगा रहे हैं, सचेत कर रहे हैं। लेकिन हम प्राकृतिक संसाधनों को लगातार विकास के नाम पर खो रहे हैं, अपने आस-पास की हरियाली और पेड़ों की शीतल छांव से भी वंचित होते जा रहे हैं।

## हरित चिंतन

हरित चिंतन का अर्थ पर्यावरण-अनुकूल, टिकाऊ और प्राकृतिक संसाधनों का सम्मान करने वाली सोच है, जो भारत के संदर्भ में हरित क्रांति से जुड़ी है जिसने १९६० के दशक में खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिए आधुनिक कृषि तकनीकों को अपनाया। लेकिन अब यह अधिक समग्र रूप से हरित खेती और पर्यावरण संतुलन के लिए पंचायतों के स्तर पर भी लागू हो रहा है जिसका लक्ष्य आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित पारिस्थितिकी तंत्र बनाना है।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि प्रकृति का संरक्षण और संवर्धन करना प्रत्येक मानव का प्रथम कर्तव्य होना चाहिए। तभी हम एक सुखी संसार भावी पीढ़ी को विरासत में दे सकेंगे। हमारे पूर्वजों ने भविष्य में होने वाली प्राकृतिक दशा का अनुमान अपने समय में ही लगा लिया था, यही कारण था कि न केवल उन्होंने प्रकृति को संरक्षण दिया साथ ही समय-समय पर उसके महत्त्व को भी उजागर करते रहे। अत: अब हमें अपने कर्तव्य को समझते हुए इस अमूल्य निधि को संजोने में लग जाना चाहिए। तभी हम अपने मानव होने के ऋण से स्वयं को मुक्त कर सकेंगे।

## संदर्भ सूची:

1. रामचरितमानस
2. कबीर की साखी
3. रहीम के पद